अमेरिका की हेठी

भारतीय विदेश मंत्रालय ने उस अमेरिकी रिपोर्ट को उचित ही खारिज किया है, जिसमें भारत में धार्मिक अल्पसंख्यकों, कमजोर वर्गों और सरकार के आलोचकों के विरुद्ध हिंसात्मक हमले होने तथा अनेक मामलों में सरकार की विफलता की बात कही गयी है. भारत ने कहा है कि अल्पसंख्यकों समेत सभी नागरिकों को संविधान के अंतर्गत मौलिक अधिकार प्राप्त हैं तथा किसी विदेशी सरकार को इन अधिकारों के अनुपालन की स्थिति पर टिप्पणी का अधिकार नहीं है. अमेरिकी विदेश विभाग दुनियाभर में धार्मिक अधिकारों का आकलन कर एक रिपोर्ट प्रकाशित करता है. अंतरराष्ट्रीय राजनीति के जानकार कहते रहे हैं कि ऐसे दस्तावेज वास्तव में अमेरिकी वर्चस्व को बनाये रखने के लिए एक दबाव के रूप में इस्तेमाल होते हैं. विदेश विभाग के मुख्यालय में इस रिपोर्ट को जारी करनेवाले अमेरिकी विदेश सचिव माइक पॉम्पियो इसी महीने भारत के दौरे पर आ रहे हैं. भारत और अमेरिका के बीच आयात शुल्कों को लेकर तनातनी चल रही है. कुछ समय पहले ही अमेरिका ने भारत को मिली विशेष व्यापारिक छूट को भी वापस लिया है. वाणिज्यिक मामलों के अलावा भारत द्वारा रूस से सैन्य साजो-सामान खरीदने पर भी अमेरिका ने आपत्ति जतायी है. ऐसे माहौल में इस रिपोर्ट का जारी होना महज संयोग नहीं हो सकता है. इसे विडंबना नहीं तो और क्या कहा जा सकता है कि मानवाधिकारों के हनन के लिए भारत पर अंगुली उठानेवाले ट्रंप प्रशासन को अमेरिका में हो रहे मानवाधिकार हनन तथा नस्ल के आधार पर हो रही हिंसा की चिंता नहीं है. प्रतिष्ठित अमेरिकी संस्था सदर्न पॉवर्टी लॉ सेंटर की रिपोर्ट के अनुसार, 2018 में अमेरिका में नस्लभेदी घृणा समूहों की संख्या एक हजार से अधिक हो चुकी है. इस रिपोर्ट ने ऐसे समूहों की बढ़ोतरी में एक बड़ा कारक राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के विवादित बयानों को भी माना है. जांच ब्यूरो एफबीआइ के अनुसार, राष्ट्रपति के चुनावी वर्ष 2016 के बाद से घृणा आधारित अपराधों की संख्या में लगातार वृद्धि हुई है. धार्मिक स्थलों और संस्थानों पर हमले की भी अनेक घटनाएं हो चुकी हैं. अमेरिकी मीडिया में खबरों और चर्चाओं के अलावा प्रतिनिधि सभा व सीनेट में भी नस्लभेदी घटनाओं की बढ़त पर बहस होती रही है. संयुक्त राष्ट्र और अमेरिकी सीनेट में यमन में भयावह बमबारी और गंभीर मानवीय संकट के लिए ट्रंप प्रशासन पर अंगुली उठायी जा चुकी है. मानवाधिकारों का हनन या किसी समुदाय के विरुद्ध हिंसा न केवल निंदनीय है, बल्कि मानवीय सभ्यता पर एक प्रश्नचिह्न भी है. हमारे देश में कुछ राजनीतिक या सामुदायिक तत्व भले ही ऐसी हिंसा को उकसाते हों, पर सरकार, प्रशासन और न्यायिक तंत्र में न्याय की गुंजाइश हमेशा है. केंद्र और राज्य सरकारों ने समय-समय पर ठोस कदम भी उठाये हैं तथा अनेक मामलों में अदालतों ने कठोर सजा भी दी है. देश के भीतर न्याय की आवाज उठाने और शासन के रवैये की आलोचना के भी प्रभावी मंच हैं. हमें अमेरिका या किसी अन्य देश के हस्तक्षेप या निर्देश की दरकार नहीं है.

अंतरराष्ट्रीय राजनीति के जानकार कहते रहे हैं कि ऐसे दस्तावेज अमेरिकी वर्चस्व को बनाये रखने के लिए एक दबाव के रूप में इस्तेमाल होते हैं.

बोधि वृक्ष

पारिवारिक भावना

वसुधैव कुटुंबकम यानी विश्व परिवार की भावना और विश्व कल्याण की कामना ही सच्ची-सच्ची राष्ट्रीयता है. जिस तरह अनेकों घरों को मिलाने से गांव, अनेकों गांव व शहरों को मिलाने से शहर बनता है, वैसे ही अनेकों देशों के समूह को विश्व कहा जाता है. सभी घर तो अलग-अलग है पर मिलने से गांव व शहर कहे जाते हैं वैसे ही देश व राष्ट्र अलग-अलग होते हुए भी सभी के मिलने से धरती शोभायमान लगती है. सभी इंद्रियों के मेल से हमारा शरीर शोभायमान होता तो अनेकों छोटे-बड़े देशों रूपी इंद्रियों से वसुंधरा सुशोभित है. किसी भी अंग-अवयव में पीड़ा होने पर पूरा शरीर बेचैन रहता, तो देश व राज्यों के पीड़ित होने पर पृथ्वी भी संकटग्रस्त हो जाती है. संचार क्रांति के कारण हर देश की पीड़ा घंटों-मिनटों में पूरे देश में फैल जाती है. इंद्रियों के निरोगी होने पर पूरा शरीर बलिष्ठ बना रहता है, वैसे ही सभी देशों की समृद्धि से धरा स्वर्ग कहलाती है. सत्य समझ खत्म हो जाने से ही देश प्रेम के नाम पर मानव बम तक बनाकर लोग एक दूसरे को तहस-नहस करने में जुटे हुए हैं. हमें अब से ऐसा कार्य-व्यवहार करना चाहिए, जिससे सर्व का भविष्य स्वर्णिम बन सके फलस्वरूप संसार ही कल्याणमय क्रीड़ांगन बन जायेगा. पृथ्वी पर विचरण करनेवाले हर नर-नारी को विश्व परिवार की भावना से देखना चाहिए. हरेक देशवासी दूसरे देशवासियों को पड़ोसी के साथ-साथ सेवा-सहकर्मी समझकर व्यवहार करे. संपूर्ण मानवता को पारिवारिक भावना से अपनाने से ही धरती पर स्वर्ग की कल्पना साकार होगी. तब ही सभी प्राणी सुख-शांति-आनंद का अनुभव कर सकेंगे. सत्याचरण से ही संसार में सौहार्द कायम होगा. सत्य व्यवहार से ही पारस्परिक प्रेम और विश्वास बढ़ता है. असत्यता से अविश्वास और घृणा को बढ़ावा मिलता है. इसने ही मानवता में विभाजन रेखाएं खीची हैं. अब राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय नीतियों में भी सत्य पर आधारित व्यवहार व्यापार होना चाहिए. कूटनीतिक प्रचलन से दुनिया का पतन और विभाजन बढ़ता ही जा रहा है.

ब्रह्म कुमारी

मनमोहन सिंह की मौन विदाई

आशुतोष चतुर्वेदी
प्रधान संपादक, प्रभात खबर
ashutosh.chaturvedi@prabhatkhabar.in

पूर्व प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह का राज्यसभा का कार्यकाल बजट सत्र से ठीक पहले 14 जून को समाप्त हो गया. वह 28 साल तक राज्यसभा के सदस्य रहे. उनकी विदाई को लेकर कोई आयोजन नहीं हुआ. मीडिया में भी एक छोटी-सी खबर आयी. किसी हिंदी टीवी चैनल ने उनके कार्यकाल का लेखा-जोखा पेश नहीं किया. कोई शख्स तीन दशकों तक राज्यसभा का सदस्य, 10 साल तक प्रधानमंत्री, विपक्ष का नेता और देश का वित्त मंत्री रहा हो, जो देश की अर्थव्यवस्था को नेहरूवादी मॉडल से उदारीकरण की दिशा में ले गया हो, उसके बारे में कोई विमर्श तक न होना आश्चर्यजनक है.

मनमोहन सिंह 2004 से 2014 तक प्रधानमंत्री रहे. वह 1998 से 2004 तक विपक्ष के नेता थे. उन्होंने 1991 में नरसिम्हा राव सरकार में सीधे वित्त मंत्री के रूप में राजनीति के मैदान में कदम रखा. उनके वित्त मंत्री बनने की कहानी दिलचस्प है. विनय सीतापति अपनी किताब हाऊ पीवी नरसिम्हा राव ट्रांसफॉर्म्ड इंडिया में लिखते हैं कि 1991 में राव रिटायरमेंट मोड में चले गये थे, लेकिन 21 मई, 1991 को श्रीपेरंबदूर में राजीव गांधी की हत्या हो गयी. कुछ दिनों बाद सोनिया गांधी ने इंदिरा गांधी के पूर्व प्रधान सचिव पीएन हक्सर को बुलाया और पूछा कि पीएम पद के लिए कौन सबसे उपयुक्त व्यक्ति हो सकता है? हक्सर ने तत्कालीन उपराष्ट्रपति शंकरदयाल शर्मा का नाम सुझाया, लेकिन वह तैयार नहीं हुए. इसके बाद नरसिम्हा राव का नाम सुझाया गया. विनय सीतापति का कहना है कि नरसिम्हा राव अनेक मंत्रालयों के काम में दक्ष थे, पर वित्तीय मामलों में उनका हाथ तंग था. पीसी एलेक्जेंडर उनके करीबी थे. राव ने उनसे कहा कि वह एक ऐसे शख्स को वित्त मंत्री बनाना चाहते हैं, जिसे आर्थिक मामलों की गहरी समझ हो. एलेक्जेंडर ने आइजी पटेल का नाम सुझाया, जो आरबीआइ के गवर्नर रह चुके थे और उस दौरान लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स के निदेशक थे, पर पटेल ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया. तब मनमोहन सिंह का नाम सुझाया गया. शपथ ग्रहण समारोह से एक दिन पहले 20 जून को एलेक्जेंडर ने मनमोहन सिंह को फोन किया. उस समय वह सो रहे थे. उन्हें जगा कर बताया गया कि वह भारत के अगले वित्त मंत्री होंगे. मनमोहन सिंह को विश्वास नहीं हुआ. वह अगले दिन रोजाना की तरह यूजीसी के दफ्तर पहुंच गये. तब नरसिम्हा राव का फोन आया कि 12 बजे शपथ ग्रहण समारोह है, आप तत्काल आइए. वित्त मंत्री के रूप में नरसिम्हा राव ने मनमोहन सिंह को खुली छूट दी और उन्होंने आर्थिक उदारीकरण की शुरुआत की और भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक बनाया. उन्होंने आयात-निर्यात व्यवस्था को सरल किया और निजी पूंजी निवेश को प्रोत्साहित किया. इस दौरान आर्थिक नीतियों को लेकर मनमोहन सिंह लगातार निशाने पर रहे, लेकिन जल्द ही उदारीकरण के बेहतर परिणाम सामने आने लगे. देश की आज जो मजबूत अर्थव्यवस्था नजर आ रही है, उसकी नींव मनमोहन सिंह ने ही रखी थी.

आर्थिक नीतियों को लेकर मनमोहन सिंह लगातार निशाने पर रहे, लेकिन जल्द ही उदारीकरण के बेहतर परिणाम सामने आने लगे. देश की आज जो मजबूत अर्थव्यवस्था नजर आ रही है, उसकी नींव उन्होंने ही रखी थी.

कुछ लोगों को यह भ्रम है कि मनमोहन सिंह अचानक प्रधानमंत्री पद तक पहुंच गये थे. मनमोहन सिंह ने कैंब्रिज विश्वविद्यालय से शिक्षा पायी. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी से अर्थशास्त्र में डी फिल किया. पंजाब विश्वविद्यालय और दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में शिक्षक रहे. 1971 में वाणिज्य मंत्रालय में आर्थिक सलाहकार बने. 1972 में वित्त मंत्रालय में मुख्य आर्थिक सलाहकार बनाये गये. वह वित्त मंत्रालय के सचिव, योजना आयोग के उपाध्यक्ष, आरबीआइ के गवर्नर, पीएम के सलाहकार, यूजीसी के अध्यक्ष रहे. 1991 से 1996 तक देश के वित्त मंत्री रहे. उनका यह कार्यकाल उनके कैरियर का स्वर्णिम दौर माना जाता है. देश के आर्थिक इतिहास में इतने साहसिक और निर्णायक कदम किसी वित्त मंत्री ने नहीं उठाये हैं.

सोशल मीडिया पर उन्हें मौन प्रधानमंत्री, मौनी बाबा, मौन मोहन जैसे विशेषणों से नवाजा जाता है. इसमें आंशिक सच्चाई भी है. उन्होंने 22 मई, 2004 को पहली बार और 22 मई, 2009 को दूसरी बार पीएम पद की शपथ ली थी, पर पीएम के रूप में उनके अच्छे कार्य दब गये. उनकी ही पार्टी कांग्रेस ने उन्हें श्रेय नहीं लेने दिया. घोटालों और विवादों ने उनके कार्यकाल पर ग्रहण लगा दिया. दूसरे कार्यकाल में तो कांग्रेसी मंत्री अनियंत्रित थे. उनकी पार्टी भी उन्हें कमतरी का एहसास कराती रही. सोनिया गांधी का राष्ट्रीय सलाहकार परिषद सुपर कैबिनेट की तरह काम करता था. सभी सामाजिक सुधारों के कार्यक्रमों की पहल करने का श्रेय उसे ही दिया जाता था. मनमोहन सिंह के मीडिया सलाहकार रहे डॉक्टर संजय बारू ने उन पर एक किताब - एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर लिखी है. उनका मानना है कि हालांकि सोनिया गांधी उनसे बहुत आदर से पेश आती थीं, लेकिन मनमोहन सिंह ने यह मान लिया था कि पार्टी अध्यक्ष का पद पीएम के पद से अधिक महत्वपूर्ण है. ऐसा देश में पहली बार हुआ. पीएम मनमोहन सिंह को इस बात की छूट नहीं थी कि वह अपने मंत्रियों का खुद चयन करें. संजय बारू ने एक दिलचस्प वाकये का जिक्र किया था. मंत्रिमंडल में फेरबदल होना था. राष्ट्रपति को मंत्रियों के नाम भेजे जाने से ठीक पहले सोनिया गांधी का नामों में परिवर्तन का संदेश आया. लिस्ट टाइप करने का समय नहीं था. इसलिए मूल लिस्ट में एक नाम पर व्हाइटनर लगा कर दूसरा नाम लिख दिया गया. आंध्र के एस रेड्डी को शपथ दिलायी गयी और हरीश रावत का नाम काट दिया गया. कांग्रेसी नेता खुले आम कहते थे कि पार्टी पीएम से बड़ी है. मनमोहन सिंह ने कभी इसका प्रतिवाद नहीं किया. लिहाजा, पीएम पद का रुतबा खत्म हो गया. रही-सही कसर राहुल गांधी ने पूरी कर दी थी. सितंबर, 2013 में एक प्रेस कॉन्फ्रेंस के दौरान उन्होंने आपराधिक छवि वाले नेताओं से संबंधित अपनी ही सरकार के एक अध्यादेश की प्रति को फाड़ दिया था. वह अध्यादेश मंत्रिमंडल द्वारा स्वीकृत था.

मनमोहन सिंह भाषण देने में झिझकते हैं. उनकी आवाज भी पतली है. उन्हें हिंदी पढ़नी नहीं आती है. वह भाषण या तो गुरमुखी में लिखते हैं या उर्दू में. हाल में उन्होंने एक समारोह में खुद पर चुटकी लेते हुए कहा था कि वह भारत के एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर ही नहीं हैं, एक्सीडेंटल वित्त मंत्री भी हैं. वह 1991 में पहली बार असम से राज्यसभा सांसद चुने गये थे. इसके बाद से वह लगातार पांच बार राज्यसभा के लिए चुने जाते रहे. एक बार लोकसभा का चुनाव भी लड़ा, लेकिन हार गये. ऐसी खबरें हैं कि असम विधानसभा में कांग्रेस के पर्याप्त सदस्य नहीं है, इसलिए कांग्रेस ने डीएमके से उन्हें तमिलनाडु से राज्यसभा में भेजने का अनुरोध किया है. देखना होगा कि मनमोहन सिंह की ब्रेक के बाद संसद में वापसी हो पाती है या नहीं.

एक राष्ट्र-एक चुनाव की अवधारणा

योगेंद्र यादव
अध्यक्ष, स्वराज इंडिया
yyopinion@gmail.com

सवाल है कि यह प्रस्ताव हमारे लोकतंत्र की समस्याओं को घटायेगा या उसे और बढ़ायेगा? क्या चुनावी कैलेंडर की समस्याओं को सुलझाने के लिए हमें देश की संवैधानिक व्यवस्था में इतना बड़ा बदलाव करने की जरूरत है?

सुनने में 'एक राष्ट्र एक चुनाव' बड़ा सुंदर लगता है, लेकिन क्या इसके पीछे का प्रस्ताव भी उतना ही सुंदर है? क्या देशभर में लोकसभा और विधानसभा के चुनाव पांच साल में एक बार एक साथ करवाने का प्रस्ताव हमारे लोकतंत्र के लिए एक अच्छा कदम है? पहली नजर में बड़ा सीधा प्रस्ताव है. देशभर में हर पांच साल बाद लोकसभा चुनाव होना तय है, लेकिन विधानसभा के चुनाव का कैलेंडर लोकसभा से जुड़ा हुआ नहीं है. इसलिए केंद्र सरकार के पांच साल के कार्यकाल में हर साल एक या दो बार कई राज्यों की विधानसभाओं के चुनाव होते हैं. चुनाव आचार संहिता लागू होते ही उन राज्यों में केंद्र सरकार की फाइलें भी रुक जाती हैं. केंद्र सरकार के कामकाज में व्यवधान पड़ता है. सरकार चुनाव के दबाव में काम करती है. इसलिए कोई दीर्घकालिक नीति नहीं बना पाती. यूं भी राज्य और केंद्र के चुनाव अलग-अलग करवाने से खर्चा भी दोहरा हो जाता है.

इसलिए प्रस्ताव यह है की पांच साल में एक बार एक साथ सभी राज्यों की विधानसभा और लोकसभा के चुनाव कराये जाएं, ताकि अगले पांच साल तक बिना किसी विघ्न के सरकारें अपना काम करें. सुन कर लगता है कि कई झंझटों से एक बार ही छुटकारा मिल जायेगा, लेकिन यह प्रस्ताव इतना सरल-सीधा नहीं है. यह प्रस्ताव सिर्फ चुनाव की तिथि बदलने का प्रस्ताव नहीं है. इसे केवल प्रशासनिक परिवर्तन से लागू नहीं किया जा सकता. इस प्रस्ताव को मानने का मतलब होगा हमारे संविधान और हमारे लोकतंत्र के बुनियादी ढांचे में परिवर्तन करना. हमारे संविधान निर्माताओं ने हमारी परिस्थिति को देखते हुए अमेरिका की राष्ट्रपति पद्धति को नामंजूर कर ब्रिटेन का संसदीय लोकतंत्र का ढांचा अपनाया. हमारे संसदीय ढांचे में यह अनिवार्य है कि देश के प्रधानमंत्री को संसद में बहुमत प्राप्त हो.

अब सोचिए कि अगर 'एक राष्ट्र एक चुनाव' का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाता है और अगर किसी राज्य में या केंद्र में कोई सरकार दो या चार साल बाद सदन में बहुमत खो देती है, तो क्या होगा? क्या उस सरकार को पांच साल तक चलने दिया जायेगा? अगर ऐसा नियम बन भी जाता है, तो कोई सरकार कैसे राज करेगी, अगर वह सदन में अपना बजट ही पास नहीं करवा सकती? क्या दोबारा चुनाव करवाये जायेंगे, लेकिन सिर्फ बची हुई अवधि के लिए? यानी कि अगर कोई सरकार चार साल के बाद गिर जाती है, तो क्या राज्य में या देश में सिर्फ एक साल की सरकार चुनने के लिए नये चुनाव होंगे? सवाल है कि यह प्रस्ताव हमारे लोकतंत्र की समस्याओं को घटायेगा या कि उसे और बढ़ायेगा?

अगर हर स्तर पर चुनाव अलग-अलग होते हैं, तो वोटर हर स्तर के लिए अपनी अलग सोच बना कर वोट दे सकते हैं, लेकिन जब अलग-अलग स्तरों के चुनाव एक साथ होते हैं, तो कहीं-न-कहीं दोनों मत एक-दूसरे के साथ जुड़ जाते हैं. बेशक, आज वोटर पहले से ज्यादा जागरूक हैं. ओड़िशा का चुनाव यह दिखाता है कि एक साथ वोट करने के बावजूद भी वोटर लोकसभा के लिए भाजपा को ज्यादा वोट देते हैं, तो विधानसभा के लिए बीजद को पसंद करते हैं. फिर भी, जब दो अलग-अलग स्तरों का चुनाव प्रचार और मतदान एक साथ होता है, तो दोनों में घालमेल की स्थिति बनती है. एक साथ चुनाव के प्रस्ताव से हमारी राजनीति के स्थानीय और आंचलिक चरित्र को धक्का लगेगा.

सवाल यह भी है कि क्या चुनावी कैलेंडर की समस्याओं को सुलझाने के लिए हमें देश की संवैधानिक व्यवस्था में इतना बड़ा बदलाव करने की जरूरत है? मुझे लगता है कि अगर चुनावी कैलेंडर में तीन सुधार कर दिये जाएं, तो हमें 'एक राष्ट्र एक चुनाव' जैसे बड़े संवैधानिक बदलाव की कोई जरूरत नहीं रहेगी.

पहला, चुनाव की आचार संहिता में बदलाव किया जाना चाहिए, ताकि किसी राज्य में विधानसभा चुनाव के समय केंद्र सरकार का सामान्य कामकाज न रुके. दूसरा, चुनाव आयोग मतदान की अवधि को कम कर सकता है. अगर चुनाव मतदान की प्रक्रिया एक सप्ताह में पूरी कर ली जाए, तो सरकार के कामकाज में व्यवधान कम पड़ेगा. तीसरा, अगर चुनाव आयोग चाहे, तो अपने आप ही कई राज्यों के चुनाव को एक-दूसरे के साथ जोड़ सकता है. संविधान के तहत चुनाव आयोग को यह अधिकार है कि लोकसभा या किसी राज्य की विधानसभा का कार्यकाल पूरा होने के छह महीने पहले तक कभी भी चुनाव करवा सकता है. इस तरह से केंद्र सरकार के पांच साल के कार्यकाल में आठ से 10 बड़े विधान चुनाव होने की बजाय केवल चार या पांच बड़े विधानसभा चुनाव हुआ करेंगे.

अब रही बात चुनावों में होनेवाले बेतहाशा खर्चे को कम करने की, तो इसके लिए चुनाव के कैलेंडर को बदलने की जरूरत नहीं है. चुनाव में बेतहाशा खर्च का असली कारण है चुनाव की कानूनी सीमा से अधिक होनेवाला खर्च. इसलिए चुनाव आयोग को चुनावी खर्च की सीमा को सख्ती से लागू करना चाहिए.

निष्कर्ष साफ है. चुनावी कैलेंडर के कारण होनेवाली असुविधा और तमाम राजकाज की दिक्कतों को बिना 'एक राष्ट्र एक चुनाव' के भी खत्म किया जा सकता है. इसलिए सवाल यह है कि इसके बाद भी सरकार इस प्रस्ताव को क्यों ला रही है और वह भी अपने नये कार्यकाल में सबसे पहले? आखिर इसकी जरूरत क्या है?

आपके पत्र

चिंताजनक है ग्लेशियर का पिघलना

ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्लेशियर के पिघलने की दर तेजी हो रही है. इसकी एक वजह यह भी है कि बड़ी संख्या में भारतीय नवधनाढ्य अपनी बड़ी-बड़ी गाड़ियों से हिमालयी क्षेत्र में पहुंच रहे हैं. शिमला, मसूरी, नैनीताल, अल्मोड़ा आदि में जाम की स्थिति बनती जा रही है. माउंट एवरेस्ट जैसे उच्च शिखर पर इस साल इतनी भीड़ पहुंची कि वहां जाम की स्थिति पैदा हो गयी और इससे शिखर पर पहुंचने में विलंब होने से कई पर्वतारोहियों के ऑक्सीजन सिलिंडर खाली हो गये और कई पर्वतारोहियों की मृत्यु भी हो गयी. हिमालयी क्षेत्रों में पेट्रोल और डीजल के जलने से उत्पन्न अत्यधिक कार्बनडाइऑक्साइड से भी ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं. हिमालय के वन्य जीवों के लिए भी चारधाम सड़क चौड़ीकरण योजना अभिशाप साबित हो रही है. इन सब की भरपाई मनुष्य प्रजाति अपनी तमाम वैज्ञानिक प्रगति के बावजूद किसी सूरत में नहीं कर सकती. इसलिए हर स्तर पर चेतने और संयम बरतने की जरूरत है.

निर्मल कुमार शर्मा, गाजियाबाद

तीन तलाक पर विरोध दुर्भाग्यपूर्ण

तीन तलाक पर प्रतिबंध के लिए केंद्रीय कानून मंत्री ने हंगामे के बीच नया विधेयक लोकसभा में पेश किया. विपक्ष दलों ने इसका विरोध किया. दरअसल, पिछले साल दिसंबर में लोकसभा में यह बिल पास हुआ था और राज्यसभा में पेंडिंग था. इस बीच लोकसभा भंग हो गयी, तो बिल भी खत्म हो गया. लिहाजा नये सिरे से इस बिल को लाया गया. सोनिया गांधी महिला हैं और अपनी पार्टी की शीर्ष नेता भी, पर उनकी पार्टी लोकसभा में महिला विरोधी हो रही है. असदुद्दीन ओवैसी भले कह लें कि हमारे पास पहले ही घरेलू हिंसा के लिए कानून और मुस्लिम मैरिज एक्ट हैं, मगर सच यही है कि ये पर्याप्त नहीं हैं. तीन तलाक के पक्ष में मुस्लिम महिलाएं भी हैं और मुस्लिम समाज के प्रबुद्ध लोग भी. यह लोकसभा चुनाव के दौरान भी दिखा. कुल मिला कर लोकसभा में विरोध की यह स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण है.

अमन सिंह, प्रेमनगर, बरेली

सच से परे है अमेरिकी रिपोर्ट

अमेरिकी विदेश विभाग द्वारा जारी अंतरराष्ट्रीय धार्मिक स्वतंत्रता रिपोर्ट, 2018 में जिस तरह से भारत में अल्पसंख्यक वर्ग के खिलाफ हिंसा होने तथा उसके पीछे षड्यंत्र की बात कही गयी है, वह निश्चित तौर पर पूर्वाग्रह से प्रेरित और झूठ का पुलिंदा है. सच तो यह है कि ऐसे ज्यादातर मामलों में स्थानीय विवादों और अपराधी तत्वों का हाथ होता है. पिछले कुछ समय में हुई हत्या और बलात्कार जैसी घटनाओं का ब्योरा देखें, तो स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे मामलों में पीड़ित पक्ष हों या फिर इन्हें अंजाम देने वाले, किसी एक वर्ग से संबंधित नहीं रहे हैं. दुर्भाग्यवश इस प्रमुख तथ्य को इस रिपोर्ट में नजरअंदाज कर दिया गया है. निस्संदेह, भारत की लोकतांत्रिक और न्यायिक संस्थाओं की जड़ें बहुत गहरी हैं और वे ऐसे विवादों का फैसला करने एवं दोषियों को सजा देने में पूर्णतः सक्षम हैं.

चंदन कुमार, देवघर

कुछ अलग

चाइनीज क्रिकेट और कबड्डी

आलोक पुराणिक
वरिष्ठ व्यंग्यकार
puranika@gmail.com

विश्व कप क्रिकेट में पाकिस्तान भारत से हारा और आम तौर पर वह धमकी भी न दे पाया, जो पाकिस्तान की खासियत है. वह इन दिनों हर बात में चीन से दोस्ती का दम भरता है. वह चीन को लेकर धमकी न दे पाया, इसकी वजह यह नहीं है कि चीन में क्रिकेट नहीं खेला जाता. इसकी वजह यह है कि चीन का एक मोबाइल ब्रांड भारतीय क्रिकेट टीम का स्पांसर है. चीन क्रिकेट खेलता नहीं है, पर खेलाता है. मोबाइल का एक और चीनी ब्रांड कबड्डी की एक प्रतियोगिता का स्पांसर है, यद्यपि कबड्डी खालिस भारतीय गेम है. चीनी ब्रांड की दिलचस्पी न क्रिकेट में है, न कबड्डी में है. चीन की रुचि धंधे में है. चीन पाकिस्तान की जमीन लेने के लिए उसको दोस्त बना सकता है, भारत के मोबाइल ग्राहक पाने के लिए भारतीय क्रिकेट टीम को स्पांसर कर सकता है.

चीन बिजनेस पार्टनर तलाशता है, पाकिस्तान को लगता है कि चीन उसका दोस्त है. क्रिकेट दरअसल एक रोजगार योजना है, जिससे बहुतों को रोजगार मिलता है. चीन के मोबाइल बनानेवालों को भी रोजगार मिलता है. एक टीवी चैनल की योजना थी कि वह पाक-भारत मैच की कमेंट्री के लिए सन्नी देओल को बुलायेगा. योजना यह थी कि जब भी कोई पाकिस्तानी विकेट गिरेगा, सन्नी देओल गदर फिल्म के अपने गेटअप में तारा सिंह बन कर हैंडपप लेकर दौड़ेंगे.

किसी ने समझाने की कोशिश की कि क्रिकेट मैच में हैंडपंप लेकर सन्नी देओल का आना ठीक नहीं लगेगा, तो इसका जवाब यह दिया गया कि हाल के लोकसभा चुनाव में भी सन्नी देओल हैंडपंप हाथ में लेकर ही चुनाव प्रचार कर रहे थे. हैंडपंप चुनाव से लेकर क्रिकेट तक कहीं भी दिख सकता है. हां, कई बार वहां चलता हुआ नहीं दिखता, जहां उसे चलना चाहिए. गदर फिल्म की कहानी में पाकिस्तान था, इस फिल्म से लगातार रोजगार मिलता रहा. सन्नी देओल तो हैंडपंप दिखा कर सांसद तक बन लिये.

हैंडपंप से पानी निकले या न निकले, सांसद निकल लिया. क्रिकेट रोजगार देता है और भारत-पाकिस्तान क्रिकेट तो बहुतों को रोजगार देता है.

पाकिस्तान की अभिनेत्री वीना मलिक भारत-पाक मैच से जुड़े मसलों को लेकर ट्विटर पर भारतीय टेनिस खिलाड़ी व पाकिस्तानी बहू सानिया मिर्जा से भिड़ गयीं. वीना मलिक मूलतः अभिनेत्री हैं, पर चर्चा उन्हें क्रिकेट से जुड़े विवादों से मिली. वीना मलिक को चर्चा में बने रहने का गुर समझ में आ गया, वह कुछ और ज्यादा चर्चित हो गयीं, तो संभव है कि वह क्रिकेट की कमेंट्री के लिए भी बुला ली जाएं.

ये...ये क्या कहा आपने कि क्रिकेट की कमेंट्री के लिए क्रिकेट का ज्ञान जरूरी होता है?

जी, हाल में भारत-पाक मैच की कमेंट्री में भारतीय फिल्म स्टार रणवीर सिंह क्रिकेट पर ज्ञान दे रहे थे. भारतीय अभिनेता रणवीर सिंह को क्रिकेट पर ज्ञान देने का उतना ही अधिकार है, जितना अधिकार पाक अभिनेत्री वीना मलिक का है.

देश दुनिया से

दुनिया में सात करोड़ से ज्यादा शरणार्थी : यूएन

संयुक्त राष्ट्र का कहना है कि दुनिया में बेघर होनेवाले लोगों की तादाद रिकॉर्ड स्तर को छू रही है. साल 2018 के अंत में यह आंकड़ा सात करोड़ के पार जा पहुंचा था. यह संख्या लगातार बढ़ रही है, क्योंकि वेनेजुएला जैसे देशों में संकट जारी है. संयुक्त राष्ट्र की शरणार्थी एजेंसी यूएनएचसीआर का कहना है कि पिछले साल 20 लाख लोगों को अपना घर छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा. इस तरह दुनियाभर में बेघर लोगों की तादाद 7.08 करोड़ हो गयी है. इस आंकड़े में शरणार्थी, शरण का आवेदन करनेवाले और आंतरिक रूप से बेघर लोग भी शामिल हैं. यह आंकड़ा 2018 के आखिर तक का है. यूएनएचसीआर के प्रमुख फिलिपो ग्रैंडी का कहना है बेघर लोगों का बढ़ता आंकड़ा गलत दिशा में जा रहा है और हम शांति कायम करने में लगभग अक्षम हो गये हैं. उन्होंने कहा कि यह बात सही है कि नये संकट पैदा हो रहे हैं, नयी परिस्थितियां शरणार्थियों को पैदा कर रही हैं. लेकिन, हम तो पुराने संकटों को भी नहीं सुलझा पाये हैं. जरा सोचिए, कौन सा आखिरी संकट है, जो हमने सुलझाया हो. पिछले साल इथियोपिया में हिंसा की वजह से 15.6 लाख लोगों को घर छोड़ना पड़ा. क्या यह दुखद नहीं है?

कार्टून कोना

साभार : कार्टूनमूवमेंटडॉटकॉम

पोस्ट करें : प्रभात खबर, 15 पी, इंडस्ट्रियल एरिया, कोकर, रांची 834001, **फैक्स करें** : 0651-2544006,
मेल करें : eletter@prabhatkhabar.in पर ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है